गुनाह-बेगुनाह
मैत्रेयी पुष्पा
राजकमल प्रकाशन

विद्रूपताओं का आईना : गुनाह-बेगुनाह

पूनम सिंह

"गुनाह-बेगुनाह" मैत्रेयी पुष्पा का एक ऐसा उपन्यास है जिसमें एक ओर पुलिस व्यवस्था में व्याप्त अनैतिकता व काले कारनामों का कच्चा चिट्ठा है तो दूसरी ओर प्रगतिशील व आधुनिक होते देश में छुपी वह त्रासदी है जिसमें पारम्परिक रूढ़ियाँ, सड़े-गले रस्मों-रिवाज हैं जो लड़कियों व स्त्रियों के लिए ही बनाये गये हैं। जिनसे ग्रसित होकर कभी उन पर डायन शब्द का घाव देकर उन्हें गली-मुहल्ले में घुमाया जाता है तो कभी पशुओं से भी बद्तर हालत कर उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। कहीं उन्हें गर्भ में ही मार दिया जाता है तो कभी बचपन में ही ब्याह दिया जाता है। कहीं बिना अपराध किये सजा भुगतने को विवश हैं तो कहीं घरो में ही उन्हें मार दिया जाता है। यह उपन्यास समाज की वह सच्चाई बताता है जिसमें लड़कियों के ऊपर सादियों से शोषण, अत्याचार करने की प्रवृत्ति आज भी अति सभ्य व आधुनिक कहे जाने वाले समाज से लेकर निचले पायदान तक खुले रूप से न्याय व्यवस्था को खुली चुनौती देती जा रही है। अधिकाशतः ये घटनाएँ गाँव-कस्बों और मध्य से लेकर निम्न स्तर तक के परिवारों में ज्यादा पायी जाती हैं क्योंकि वहाँ शिक्षा और पैसे के अभाव के साथ ही रूढियाँ व अनगढ़ी परम्पराएँ भी जी रही हैं, जिनका न कोई वैज्ञानिक महत्व है और न ही कोई सामाजिक मूल्य ही। अब इनके बीच इनको तोड़ने का एक सफल प्रयास अवश्य किया जा रहा है। इसके लिए कुछ पंक्तियाँ याद आती हैं-

"जुड़ गई/एक और आवाज/उन सभी में मिलकर/जिनकी चीखें सुननी/बंद कर दी है समाज के नुमांइदों ने/सामाजिक बहिष्कार झेलती/कभी सती प्रथा, कभी बलात्कार को/कभी दकियानूसी मानसिकता/कभी पुरुष प्रधान समाज की मनमानी/अब नही.../उठा कर बिठाना है/हर ओर नारी को/न खेत में अपमानित हो/न कार्यालय में/न देश में हो न विदेश में/अपमान झेलना जिल्लत पाटना/आखिर कब तक"

"गुनाह-बेगुनाह" की दो प्रमुख पात्र इला और समीना समाज में हो रहे इसी प्रयास के वे चेहरे हैं जो समाज में व्याप्त रूढ़िगत परम्पराओं को तोड़ने व उससे लड़ने का साहस करती हैं। वे समाज की इन बुराइयों से लड़कर कुछ अच्छा करने का विश्वास रखती हैं। यही कारण था कि एक पुलिस विभाग को चुनती है, तो दूसरी पत्रकारिता को। परन्तु बाद में समीना इला से प्रभावित हो पत्रकारिता छोड़ कर पुलिस विभाग में ही आ जाती है। इन दोनों का उद्देश्य यही होता है कि जो अधिकार लड़कियों को नहीं मिल पाते तथा जो बिना दोष के सजा काटने को विवश रहती हैं, ये उन लड़कियों को बचा सकें व इंसाफ दिला सकें। भारतीय समाज में ताकत का सबसे नजदीकी सबसे नृशंस चेहरा पुलिस का माना जाता है। कोई भी भारतीय जब कानून कहता है तब भी उसकी आँखों के सामने कुछ खाकी सा ही रहता है। इसके बावजूद थाने की दीवारों के पीछे क्या होता है हम में से ज्यादातर नहीं जानते। यह उपन्यास हमें इसी दीवार के उस तरफ ले जाता है और उस रहस्यमय दुनिया के कुछ दहशतनाक दृश्य दिखाता है और यह सब एक महिला पुलिसकर्मी की नजरों से।

इला जो अपने स्त्री वजूद को अर्थ देने और समाज के लिए कुछ कर गुजरने का साहस लेकर खाकी वर्दी पहनती है वहाँ जाकर देखती है वह चालाक, कुटिल लेकिन डरपोक मर्दों की दुनिया से निकलकर कुछ ऐसे मर्दों की दुनिया में आई है, जो और भी ज्यादा क्रूर, हिंसक और स्त्रीभक्षक है। ऐसे मर्द जिनके पास वर्दी और बेल्ट की ताकत भी है। इला और समीना जब पुलिस विभाग में कार्यरत होती हैं तब उन्हें समझ आता है कि जितना आसान वे सब समझती हैं उतना है नहीं। जिस प्रकार घरों व समाज में धन, जाति व लिंग के आधार पर दुर्भाव होता है, उसी प्रकार यहाँ पर भी। कुछ दिनों में ही उन्हें यह भी समझ आ जाता है कि प्रशासन में बैठा हर आदमी कोई भी निर्णय लेने को स्वतंत्र नहीं है। उसके ऊपर बैठे अधिकारी के अनुसार ही उसे काम करना पड़ता है। हर जगह जी हुजूरी, चमचागिरी और धन का प्रलोभन दिया जाता है। स्वयं से सही निर्णय लेने की स्वतंत्रता कहीं नहीं मिलती, यही कारण है कि इला के अन्दर एक बेचैनी व छटपटाहट देखने को मिलती है, जो अपने लिए स्वतंत्रता चाहती है, सही निर्णय लेने का अधिकार चाहती है। ऐसी ही बेचैनी व छटपटाहट आज की स्त्री में देखने को मिलती है। आज समाज में प्रत्येक स्त्री स्वयं में इला को देखती है। जो अपने निर्णय की स्वतंत्रता व समाज के लिए कुछ सही करने की इच्छा रखती है। वर्तमान स्त्री विमर्श भी स्त्रियों के इसी अधिकार के लिए आवाज उठाता है। इला के अन्दर युवा होती लड़की का अपना अलग सा सपना है। उसने अपने गाँव में छोटी उम्र में ही लड़कियों को ब्याह देना, पुरुषों का अपनी स्त्रियों पर आधिपत्य, प्यार करने वालों की हत्या, बिना जनमें ही लड़कियों को मार देने की चर्चायें सुनी हैं। गाँव व घरों की औरतों के दिनभर काम में लगे रहने के बाद भी उनके लिए बेड़नी और वैश्या जैसे सम्बोधन सुने हैं। यही सब कारण थे की वह परिवेश से व ऐसे समाज से दूर भाग जाना चाहती है। वह नहीं चाहती है की उसे भी इन सभी समस्याओं का सामना करना पड़े। लेखिका ने अपने इन दो पात्रों के द्वारा गाँव और कस्बे का वह रूप दिखाया है जहाँ इन सभी समस्याओं से लड़ते हुए लड़कियाँ आगे बढ़ रही हैं और नये युग व नये समय का आगमन हो रहा है। इला व समीना को लगता था कि पुलिस में आने के बाद वे लड़कियों व औरतों के साथ न्याय कर सकती हैं पर पुलिस में पूरी तरह मिलने के बाद उन्हें पता चलता है कि कुछ भी सरल नहीं है। नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के लिए जब दहलीज पार करती है तो उसे ा चलता है कि घर का यौन विभाजन बाहर समाज में भी उसका दमन करने में लगा हुआ है। जिस लड़ाई को वह घर से बाहर आसानी से जीत लेना चाहती वह बहुत कठिन है।

इस उपन्यास के दोनों प्रमुख स्त्री-पात्र, इला और समीना केवल न्यायिक और सामाजिक रूप के विवर्ण होते रूप को ही नहीं दिखाते, बल्कि इनसे जुड़कर कथानक में और भी ऐसे चरित्र प्रवेश पाते हैं जो पाठकों को अन्दर तक झंझोड़ते हैं तथा पाठकों को यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि समाज में रूढ़िवादिता किस हद तक व्याप्त है। ये पात्र प्रशासन के खोखलेपन व अधिकारियों के दोहरे चरित्र को भी उजागर करते हैं। मनीषा, शीतल, सिखणी, रश्मि कई ऐसी महिला पात्र हैं जो दोषपूर्ण न्यायिक व्यवस्था के कारण समाज, परिवार व जीवन से लड़ती रहती हैं और बदले में मानसिक व शारीरिक प्रताड़ना ही पाती हैं। इस उपन्यास के कथानक में रश्मि एक ऐसा ही पात्र है। वह अपनी माँ की अनुपस्थिति में अपने पिता के द्वारा ही खण्डित की जाती है। जब माँ को पता चलता है तो वह अपने भाई के साथ मिलकर पति व समाज की परवाह किये बिना ही उसे सजा दिलवाती है। परन्तु समाज की मान मर्यादा ही उसे एक दिन पति को वापस लाने के लिए विवश कर देती है। जिस माँ पर रश्मि को अपने से ज्यादा भरोसा था, वह टूट जाता है, क्योंकि उस दिन एक माँ से पत्नी जीत जाती है। रश्मि को अब अपने पिता से ज्यादा माँ से डर लगता था। वह बिना कुछ सोचे समझे घर से भाग जाती है। आगे चलकर उसे वेश्यावृत्ति अपनानी पड़ती है।

चकाचौंध रफ्तार और धन की शक्ति से टूटते-बिगड़ते घर समाज के रूप के साथ इसके पीछे के धुंधलके में बिखरते समाज के रूप को मैत्रेयी पुष्पा ने कहीं स्वयं तो कहीं पात्रों के द्वारा दिखाने का प्रयास किया है। यह तब और भी विद्रूप लगने लगता है, जब वेश्यावृत्ति करते पकड़ी गई रश्मि पुलिस के अत्याचारों व बर्बरता से थक कर इला को कहती है- ''आप ही देख लो नाइंसाफी कि मेरे बाप को तो पुलिस ने छोड़ दिया पर मुझे जब न तब गिरफ्तार करने की उतावला रहते हैं। उन्हें यह इल्म ही नहीं कि जुर्म किसने किया, मुजरिम कौन है।'' ऐसा प्रतीत होता है कि विचारों की दुनिया में पुरुष की स्थापना व्यक्ति के रूप में हुई है और स्त्री की वस्तु के रूप में। इसी कारण स्त्री अपने संदर्भ के बदले पुरुष के संदर्भ में परिभाषित होती रहती है। स्त्री का होना महज आकस्मिक घटना की तरह मान लिया गया है। पुरुष व्यक्ति के रूप में सम्पूर्ण है और वह जो चाहे सो कर सकता है। स्त्री तो बस अन्या है।

यह उपन्यास हमें बताता है कि मनुष्यता के खिलाफ सबसे बीभत्स दृश्य कहीं दूर युद्धों के मोर्चों और परमाणु हमलों में नहीं, यहीं हमारे घरों से कुछ ही दूर सड़क के उस पार हमारे थानों में अंजाम दिये जाते हैं और यहाँ उन दृश्यों की साक्षी है बीसवीं सदी में पैदा हुई वह भारतीय स्त्री जिसने अपने समाज के दयनीय पिछड़ेपन के बावजूद मनुष्यता के उच्चतर सपने देखने की सोची है। अतीत में स्त्री यदि विरोध भी करती थी तो उन्हीं स्थापित संरचनाओं के भीतर, मगर आज की स्त्री तो उन्हीं संरचनाओं को चुनौती दे रही है, क्योंकि यह आज का युग है, वैदिक युग नहीं। मर्दाना सत्ता की एक भीषण संरचना यानि भारतीय पुलिस के सामने उस स्त्री के सपने को रखकर यह उपन्यास एक तरह से उसकी ताकत को भी आजमाता है और कितनी भी पीड़ाजन्य सही, एक उजली सुबह की तरफ इशारा करता है।